महात्मा गांधी की कहानियाँ

डॉ॰ मनोहर लाल

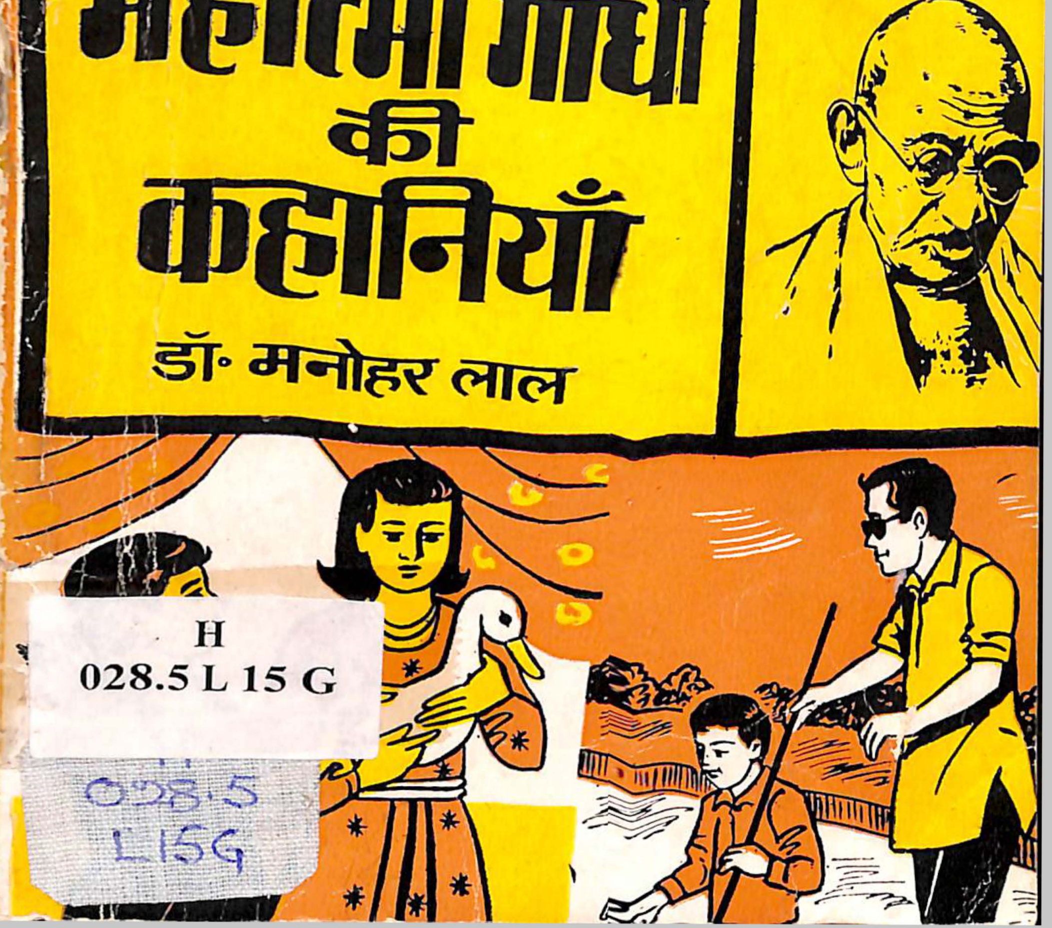

H
028.5 L 15 G

028.5
L15G

INDIAN INSTITUTE OF
ADVANCED STUDY
LIBRARY SIMLA

गांधी जी की कहानियाँ

डॉ० मनोहर लाल

Pustakayan, New Delhi

पुस्तकायन

CATALOGUED

कला के
द्धान्तों को
एक तरह

अवतार

किया ?
संसार में
शक्तियाँ

याँ प्रस्तुत
ालोकित

भावना
कहते हैं।
की देवी
ट्त करने

ने-गुणने

—लेखक

Library IIAS, Shimla
H 028.5 L 15 G
G1305
H
028.5
L15G
Acc. No. G-1305
Date 1.5.92

मूल्य : ६.००

© सुबोध / प्रकाशक : पुस्तकायन (सुबोध पॉकेट बुक्स का उपक्रम) २/४२४० ए अंसारी रोड, नई दिल्ली ११०००२ / संस्करण : १६८८ 1983
मुद्रक : गायत्री ऑफसेट प्रेस, ए-66, सैक्टर-2, नौएडा-201 301
GANDHI JI KI KAHANIYA : Short Stories : by Manohar Lal

ऐसे थे गांधी जी

महात्मा गांधी का जीवन प्रकाशपुंज जैसा है। वे जीवन कला के आचार्य हैं। आचार्य सच्चे अर्थों में वही होता है जो जिन सिद्धान्तों को मानता है, उन्हीं के अनुसार जीवन में व्यवहार भी करता है। एक तरह उसका जीवन, उसके सिद्धांतों की प्रयोगशाला भी होती है।

वह जो कुछ कहता है, उसे करके भी दिखाता है। हमारे अवतार पुरुषों के जीवन में भी यही होता रहा है।

गांधी जी ने न केवल अपने देश और काल को प्रभावित किया ? उनका जीवन-आदर्श देश-काल की सीमाओं को लांघकर सारे संसार में फैला और जहाँ-कहीं भी स्वतंत्रता शोषणहीनता और समता की शक्तियाँ संगठित हुईं, गांधी जी उनका आदर्श बने।

इस छोटी पुस्तक में उनके जीवन की कुछ ऐसी दीप्त झाँकियाँ प्रस्तुत की गई हैं, जो अपनी दीप्ति से पाठक के हृदय के अंधेरे कोनों को आलोकित कर देती है।

अपनी बात को वे कभी निश्छल स्पष्टता से, कभी तर्काश्रित भावना से, कभी व्यंग्य का सहारा लेकर और कभी विनोद का पुट देकर कहते हैं। वे किसी पर चोट नहीं करते, प्रेरित करते हैं। वे हमारी भीतर की दैवी सम्पद को उद्बुद्ध करते हैं और कर्म को भक्ति और ज्ञान से सम्पुटित करने की सीख देते हैं। वे बुद्धि और हृदय के समन्वय के साधक हैं।

ये झाँकियाँ हमें उनके बारे में अधिक जानने और अधिक पढ़ने-गुणने की प्रेरणा देंगी, इस उद्देश्य के साथ प्रस्तुत हैं।

—लेखक

क्रम

गांधी जी का हरिजन प्रेम	७
बापू के तीन बन्दर	१०
कोई काम छोटा नहीं	१३
गलती दूर कर दूंगा	१५
लाठी—शरारती लड़कों के लिए	१७
४५ मिनट की देर	१८
दु:ख के साथी	२०
हिन्दी की हिमायत	२१
इतने सारे अर्जुन	२२
सबसे कीमती भेंट	२५
दान का मान	३४
झूठ का भण्डाफोड़	४०
बच्चे और बापू	४२

गांधी जी का हरिजन प्रेम

गांधी जी हरिजनों से बहुत प्रेम करते थे। सच तो यह है कि गांधी जी सभी दीन-दुखियों से प्यार करते थे। जो लोग पिछड़े हुए थे, जो धनहीन और साधनहीन थे, गांधी जी उन सबसे प्यार करते थे। उनका प्रिय भजन था—

रघुपति राघव राजाराम।
पतित पावन सीताराम॥

उनके राम भी पतितों को पावन—पवित्र करने वाले थे।

गांधी जी ने हमें बताया कि सभी मनुष्य समान हैं। कोई अछूत नहीं है।

एक बार हरिजनों को समाज में उचित स्थान दिलाने के लिए गांधी जी ने अनशन किया। अनशन का अर्थ है—कुछ नहीं खाना।

जब अनशन की समाप्ति का दिन पास आया तो उन्होंने एक हरिजन बालक से कहा, "मैं तेरे लाए सन्तरे से उपवास तोड़ूँगा।"

उस लड़के का नाम था, बिठोवा। बिठोवा यह

सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ। बात भी ऐसी ही थी। बड़े-बड़े लोगों को गांधी जी से बात तक करने का सौभाग्य प्राप्त नहीं होता था। और बिठोवा को गांधी जी स्वयं कह रहे थे कि तेरे लाए सन्तरे से उपवास तोड़ूंगा। गांधी जी तो दीन-दुखियों को महत्व देते थे। उनसे प्यार करते थे।

बिठोवा ने किसी तरह सन्तरे खरीदने के लिए चार आने जुटाए। उपवास तोड़ने से एक दिन पहले गांधी जी ने बिठोवा को याद दिलाई, "तू सन्तरे लाना। मैं तेरे लाए सन्तरे से ही अपना उपवास तोड़ूंगा।"

० ० ०

आज गांधी जी उपवास तोड़ेंगे। यों तो उपवास तोड़ने की सूचना से सभी प्रसन्न हैं। पर बिठोवा की प्रसन्नता का क्या कहना। उसने सोचा, 'चार आने के चार सन्तरे तो आ ही जाएँगे। बापू के लिए इतने ही काफी हैं।' वह चार आने जेब में डालकर खुशी से उछलता फलों की दुकान पर पहुँचा। उसने चार आने के बढ़िया से चार सन्तरे लिये और गांधी जी के पास चल पड़ा।

उधर गांधी जी के उपवास तोड़ने का समय हो

रहा था पर बिठोवा सन्तरे लेकर अभी तक आया नहीं, इसलिए उपवास कैसे टूटे ।

बड़े-बड़े लोग गांधी जी के लिए टोकरे भर-भर सन्तरे लाए थे । उनका रस निकाला जा रहा था । किन्तु गांधी जी की आँखें बिठोवा को खोज रही थीं। गांधी जी ने पूछा, "क्या बिठोवा अभी तक नहीं आया ?"

"बिठोवा कौन ? कौन बिठोवा ? उसे बुलाया है क्या ?" पास खड़े एक आदमी ने पूछा ।

तब गांधी जी ने कहा, "बिठोवा एक हरिजन बालक है। मैं उसी के लाए सन्तरे से उपवास तोड़ूंगा ।"

धन्य बापू तुम्हारा हरिजन-प्रेम ! अब तो बिठोवा की खोज होने लगी ।

बेचारा बिठोवा बाहर एक ओर खड़ा था । भीड़ इतनी थी कि भीतर आना कठिन था । फिर उस जैसे निर्धन बालक को भीतर जाने से रोकने वालों की भी कमी नहीं थी। उसका धीरज टूट रहा था । उसने सोचा, अब तक तो बापू सन्तरे का रस ले भी चुके होंगे ।

वह बेचारा क्या जाने बापू की महिमा ।

किसी ने पुकारा, "ओ लड़के ! क्या तेरा ही नाम बिठोवा है ?"

"जी हाँ ! हाँ जी !" बिठोवा ने कहा और उसका धीरज बंधा ।

"अरे जल्दी भीतर आ । उधर एक ओर क्यों खड़ा है ! बापू तेरे सन्तरों का इन्तजार कर रहे हैं । सन्तरे लाया है न ?" उस आदमी ने कहा ।

बिठोवा ने सुना तो प्रेम से गद्गद् हो गया । उसका मन भर आया । गला रुंध गया ।

वह चुपचाप उस आदमी के साथ भीतर चला गया । उसने अपने सन्तरे बापू के सामने रख दिये । उन्हीं सन्तरों का रस पीकर बापू ने अपना उपवास तोड़ा ।

बापू के तीन बन्दर

सेवा-ग्राम, वर्धा में बापू एक छोटी कुटिया में रहते थे । वे सारा दिन इसी कुटिया में काम करते थे ।

उस कुटिया में एक ओर तीन बन्दरों वाला एक चीनी मिट्टी का खिलौना रखा हुआ था ।

बापू के पास प्रतिदिन कितने ही लोग मिलने आते । सभी इन बन्दरों को देखते पर किसी की

समझ में कुछ नहीं आता। बापू ने इसे संभालकर रखा है तो कोई बात ज़रूर है। पर क्या बात है, यह समझ नहीं आता और बापू से पूछने में झिझक होती।

एक दिन एक सज्जन ने पूछ ही लिया, "बापू, इन बन्दरों में ऐसी क्या खास बात है जो आपने इन्हें अपनी कुटिया में रखा है ?"

बापू ने तीन बन्दरों के उस खिलौने को उठाया और बोले, "इस बन्दर को ध्यान से देखिए। इसने दोनों हाथों से अपना मुँह बन्द किया हुआ है। यह सिखाता है कि कभी किसी को अपने मुँह से बुरा न कहो, कभी किसी की निन्दा और चुगली न करो। अब दूसरे को देखिए, इसने अपनी आँखें बन्द कर रखी हैं। यह सिखाता है कि कभी बुरा मत देखो। तीसरे ने अपने कान इसलिए बन्द कर रखे हैं कि कभी कोई बुरी बात मत सुनो।"

यह खिलौना गांधी जी को एक विदेशी सज्जन ने भेंट किया था।

बापू के लिए यह बहुत ही महत्वपूर्ण था, क्योंकि यह बुराइयों से बचने की ओर ध्यान दिलाता था।

कोई काम छोटा नहीं

गांधी जी किसी काम को छोटा नहीं समझते थे। जब वे दक्षिण अफ्रीका में थे तो जेल में उन्होंने जूते और चप्पल बनाना सीखा था। फिर टॉलस्टाय फार्म में भी उन्होंने इसका प्रशिक्षण लिया था। वे जूते-चप्पल बनाने और उनकी मरम्मत का काम अच्छी तरह जानते थे।

एक दिन गांधी जी को पता लगा कि वर्धा के सत्याग्रह आश्रम के चप्पल बनाने वाले अच्छी चप्पलें बनाना नहीं जानते।

उन्हें चप्पल बनाना सिखाने के लिए गांधी जी ने उन्हें मगनबाड़ी में बुलाया।

सब लोग चमड़े के टुकड़े और अपने औजार लेकर गांधी जी के पास आकर बैठ गए। तब गांधी जी उन्हें समझाने लगे कि टांका कहाँ और कैसे लगाना चाहिए तथा कहाँ चमड़े की आड़ी पट्टी लगानी चाहिए और कहाँ कैसे !

जिस समय गांधी जी यह सब समझा रहे थे, तभी सरदार बल्लभभाई, राजेन्द्र बाबू, कांग्रेस कार्य समिति के सदस्य तथा कुछ केन्द्रीय मंत्री आ पहुँचे

और खड़े होकर यह सब देखने लगे।

जब गांधी जी अपना सिखाने का काम छोड़कर नहीं उठे तो उन सबके चेहरों पर उतावली प्रकट होने लगी। गांधी जी ने उनकी उतावली को भांपकर कहा, "मैं कभी चार-छः महीनों में एक बार इनको थोड़ा-सा समय देता हूँ तो आपको अखरने लगता है। अच्छे चप्पल बनाना भी कारीगरी का काम है। आप लोग देखिये कि अच्छे चप्पल कैसे बनते हैं।"

काम सीखने वाले कारीगर अपने सिर पर इतने बड़े-बड़े नेताओं को खड़ा देखकर घबरा गए। वे बारी-बारी उठकर बाहर जा बैठे और अपना काम करने लगे। कमरे में चमड़े को ठोकने की आवाज़ आती रही।

नेता लोगों को यह बुरा लगा। वे इतने महत्व-पूर्ण विषय पर चर्चा कर रहे थे और उधर ठोकापीटी का शोर हो रहा था। वे एक-दूसरे का मुँह ताकते रहे कि कोई इस शोर को रुकवाए पर कोई पहल करने को तैयार नहीं था।

आखिर एक नेता से नहीं रहा गया। उसने एक आश्रमवासी को कहा कि इन्हें यहाँ से हटा दें।

जब वह आश्रमवासी कारीगरों को उठाने के लिए

अपनी जगह से उठा तो गांधी जी ने उसे रोकते हुए कहा, "दूसरे लोग जिस जगह काम कर रहे हों, हमें भी वहीं बैठकर काम कर सकने की आदत डालनी चाहिए। और यह स्थान, ग्राम-उद्योग संघ का कार्यालय है, इसका पता इन नेता लोगों को कैसे चलेगा।"

गलती दूर कर दूँगा

बच्चे गांधी जी का कहना खूब मानते थे। वह बच्चों से जो चाहते, करा लेते।

एक बार एक बच्चा अपनी माँ के साथ उनके दर्शन करने आया। उसके कानों में सोने के गहने थे।

बापू ने उसे प्यार से अपने पास बिठाया। फिर पूछा, "कान छिदाने में तुम्हें आनन्द तो खूब मिला होगा।"

लड़का सकपकाया, बोला, "नहीं बापूजी, दर्द तो खूब हुआ था।"

गांधी जी ने कहा, "तुम्हारे कई साथी ऐसे होंगे, जिनके तन पर पूरे कपड़े भी नहीं। तुम तो अच्छे लड़के हो। क्या तुम्हें यह अच्छा लगता है कि तुम्हारा कोई भाई भूखा-नंगा रहे और तुम गहने डालने के

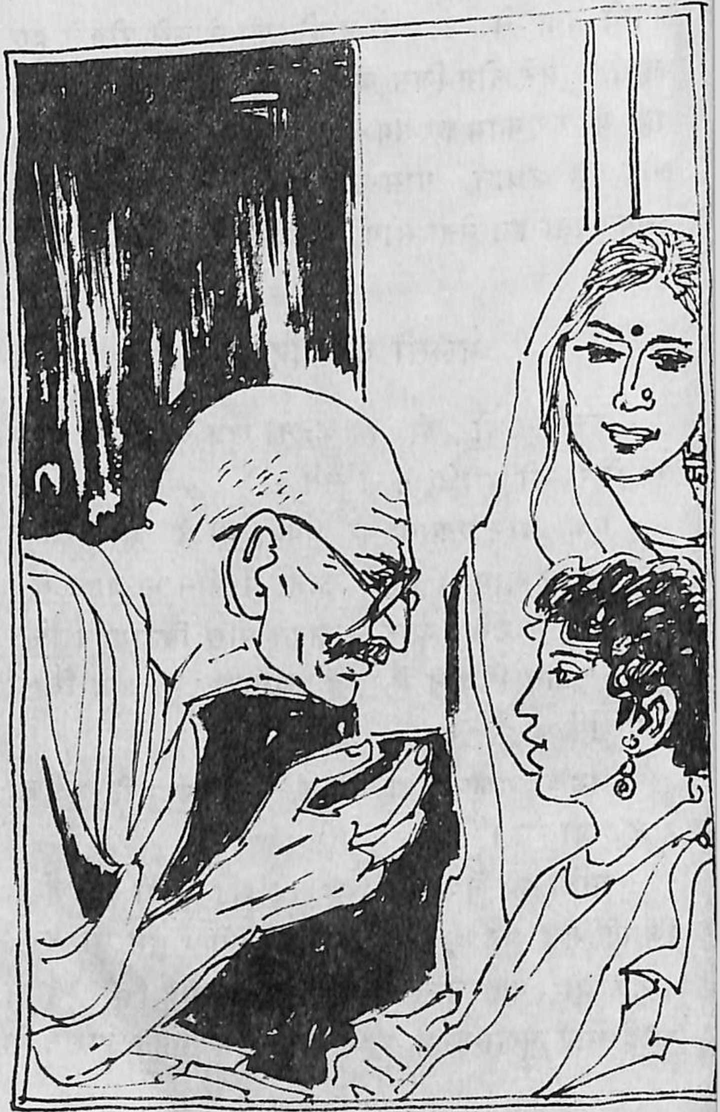

लिए कान छिदाओ ।"

बच्चा बोला, "मैं क्या करूँ बापूजी, माँ ने यह सब कराया। मैं दर्द के मारे बहुत रोया पर माँ ने मिठाई और खिलौने का लालच दिखाकर यह सब किया ।"

गांधी जी ने माँ की ओर देखा । वह बेचारी संकोच से सिमट-सी गई थी ।

बापू ने बच्चे से कहा, "भाई यह तो ठीक । पर तुम्हें अपनी गलती मालूम हो जाए तो क्या करोगे ?"

"गलती दूर कर दूँगा ।" बच्चा बोला ।

"तब क्या तुम अपने कान के गहने प्रसन्नतापूर्वक उन लोगों के लिए दे सकते हो जो नंगे-भूखे हैं । " गांधी जी ने पूछा ।

बच्चे ने कहा, "दे सकता हूँ ।" फिर उसने कान के गहने निकालकर बापू के चरणों में रख दिए ।

बापू ने उसकी पीठ थपथपाई और कहा, "इसी तरह अपने दुखिया भाइयों का सदा ख्याल रखना ।"

लाठी—शरारती लड़कों के लिए

एक बार श्री मोतीलाल नेहरू गांधी जी से मिलने आए । श्री जवाहरलाल नेहरू भी अपने पिता

के साथ थे ।

सांझ हो चुकी थी । गांधी जी के कमरे में दीपक जल रहा था । ज्यों ही श्री मोतीलाल और श्री जवाहरलाल कमरे में घुसे कि हवा का झोंका आया और दीपक बुझ गया ।

दरवाज़े के पास ही गांधी जी ने अपनी लाठी दीवार के सहारे खड़ी कर रखी थी । वे जब सैर को जाते तो लाठी साथ रखते । कमरे में अंधेरा होने के कारण श्री जवाहरलाल जी को लाठी दिखाई नहीं दी और वह उससे टकरा गए । लाठी गिर गई ।

अंधेरे और लाठी से टकराने के कारण नेहरू जी को थोड़ी खीझ हुई । उन्होंने गांधी जी से पूछा, "बापू, आप तो अहिंसा के पुजारी हैं । फिर यह लाठी आपने क्यों रखी हुई है ?"

गांधी जी बोले, "तुम्हारे जैसे शरारती लड़कों को सीधा करने के लिए ।"

यह सुनते ही सभी हँस पड़े । श्री जवाहरलाल नेहरू की खीझ हँसी में ही डूब गई ।

४५ मिनट की देर

गांधी जी समय के बड़े पाबन्द थे । वे अपना हर

काम निश्चित समय पर करते थे और दूसरों से भी आशा करते थे कि वे समय के पाबन्द बनें ।

एक बार की बात है । एक बैठक में शामिल होने के लिए वे ठीक समय पर जा पहुँचे । परन्तु एक और नेता थे, जो समय पर नहीं आए । सभी उनकी प्रतीक्षा करने लगे । उनका आना ज़रूरी था । इंतजार करते-करते ४५ मिनट बीत गए; तब कहीं उनके दर्शन हुए ।

इतने सारे लोग एक व्यक्ति के समय का पाबन्द न होने से ४५ मिनट तक बेकार बैठे अपना समय नष्ट करते रहे । गांधी जी का तो एक-एक मिनट कीमती था ।

गांधी जी ने कहा, "अगर हम सब इसी तरह काम करेंगे तो मुझे लगता है कि स्वराज्य आने में भी ४५ मिनट की देर हो जाएगी ।"

उन सज्जन को बड़ी शर्म आई । उन्होंने सबसे क्षमा भी माँगी पर इससे क्या होता है । नष्ट हुआ समय तो वापस आता नहीं ।

उसके बाद वे नेता फिर कभी देर करके नहीं आए ।

यह कहने की आवश्यकता नहीं, कि यह स्वतंत्रता मिलने से पूर्व की घटना है ।

दुःख के साथी

यह घटना साबरमती आश्रम की है।

एक रात की बात है। सभी आश्रमवासी सोये पड़े थे। एक ओर पुरुष थे तो सामने के बरामदे में कस्तूरबा तथा अन्य बहनें सो रही थीं।

रात के कोई दो-ढाई बजे होंगे। गांधी जी एका-एक अपने बिस्तर से उठे और बाहर की तरफ चल दिये। अचानक उसी समय कस्तूरबा की नींद भी खुल गई। उन्होंने गांधी जी को जाते देखा पर कुछ समझ में नहीं आया कि इस समय ये कहाँ जा रहे हैं।

उन्होंने अपने पासवाली बहन को जगाया और बताया कि पता नहीं, वे इस समय कहाँ जा रहे हैं ! आओ तो जरा चल कर देखें।

कस्तूरबा और वह दूसरी बहन उसी दिशा में चुपचाप चल पड़ीं, जिधर गांधी जी गए थे।

... ...

सड़क पर किसी आदमी को बिच्छू ने काट लिया था और वह दर्द के मारे रो रहा था। उसके रोने की आवाज़ से उनकी नींद खुल गई थी और वे पता लगाने जा रहे थे कि क्या बात है।

गांधी जी उसे धीरज बंधाकर लौट रहे थे कि उन्होंने कस्तूरबा और दूसरी बहन को रास्ते में खड़े देखा।

वे सब समझ गए। इससे पहले कि वे पूछें कि कहाँ गए थे, हँसते हुए बोले, "तुम क्या समझ रही थीं कि मैं महात्मा बुद्ध की तरह आधी रात को घर छोड़कर भाग जाऊँगा।"

हिन्दी की हिमायत

एक बार गांधी जी बंगलौर के दौरे पर थे। श्री चन्द्रशेखर वेंकट रमन की पत्नी और विज्ञान के छात्र उनसे मिलने आए। उनके आने का उद्‌देश्य था, गांधी जी को साइंस इंस्टीट्यूट में पधारने का निमंत्रण देना।

गांधी जी को विज्ञान से बड़ा प्रेम था। वे उन छात्रों को निराश नहीं करना चाहते थे। उन्होंने साइंस इंस्टीट्यूट जाने की बात स्वीकार कर ली। पर एक शर्त लगा दी। बोले, "अगर श्री रमण मुझे विज्ञान का कोई चमत्कार दिखाएं तो मैं आ सकता हूँ।"

INSTITUTE OF ADVANCED ... Acc. No. G-1303 ... 11.5.92

छात्रों ने शर्त स्वीकार कर ली।

निश्चित दिन और समय पर गांधी जी इंस्टीट्यूट पहुँचे। श्रीमती रमण और गांधी जी हिन्दी में बातें करने लगे। इतने में श्री चन्द्रशेखर वेंकट रमण भी कमरे में आए और श्रीमती जी को हिन्दी में बात करते सुनकर गांधी जी से बोले, "इनकी हिन्दी में कोई सार भी है?"

गांधी जी बोले, "सार क्यों नहीं है! इनकी हिन्दी कितनी ही टूटी-फूटी क्यों न हो, उसमें आपके विज्ञान जितना सार तो है ही।"

सब खिलखिलाकर हँस पड़े।

ऐसा था गांधी जी का हिन्दी प्रेम।

इतने सारे अर्जुन

आश्रम में रहने वाले बालक गांधी जी से तरह-तरह के प्रश्न पूछते थे। बच्चों के प्रश्नों का अन्त नहीं और गांधी जी के पास इतना समय कहाँ। अपने घर के बालक के प्रश्नों के उत्तर देते-देते माता-पिता थक जाते हैं फिर प्रश्न समाप्त नहीं होते। और जहाँ कई घरों के बालक हों और उत्तर देनेवाले हों एक राष्ट्र-

पिता, तो सब का सन्तोष कैसे हो।

पर गांधी जी बच्चों को बहुत महत्व देते थे। बच्चे उन्हें चाहते भी खूब थे और गांधी जी बच्चों से बहुत प्यार भी करते थे। फिर भला वे बच्चों के प्रश्नों की उपेक्षा कैसे कर सकते थे।

गांधी जी बच्चों के प्रश्नों के उत्तर तो देते पर संक्षेप में, नपे-तुले शब्दों में। इससे बच्चों को सन्तोष नहीं होता।

गांधी जी के पास दुनिया-भर के बड़े-बड़े लोग आते थे। दुनिया-भर के पत्रकार आते और प्रश्न पूछते। भारत के नेता उनके पास देश की समस्याओं के बारे में बात करने आते। देश को स्वतंत्र करवाने का जो आंदोलन चल रहा था, उसमें लगे हुए लोग आते। इसके अतिरिक्त गांधी जी ने हिन्दी प्रचार, गो सेवा, खादी और स्वदेशी के प्रचार के लिए जो संस्थाएं बना रखी थीं, उनके कार्यकर्त्ता मार्ग दर्शन के लिए आते। अब सिवाय इसके कोई चारा नहीं था कि वे एक मिनट भी समय बेकार न गंवाएं और संक्षेप में बात करें।

पर बच्चे तो बच्चे ठहरे। उन्हें गांधी जी की इतनी व्यस्तता का अनुमान कैसे होता। इसलिए वे

चाहते थे कि उनके प्रश्नों के लम्बे-चौड़े उत्तर दिए जाएँ।

एक बालक ने गांधी जी से कहा, "बापू ! आप हमें गीता की बातें बताते हैं। गीता में अर्जुन भगवान श्रीकृष्ण से एक छोटा-सा प्रश्न पूछता और श्रीकृष्ण जब अच्छी तरह समझाकर उसका उत्तर देते तो पूरा अध्याय बन जाता। किन्तु एक आप हैं कि हम आपसे पन्नाभर का लिखा हुआ प्रश्न पूछते हैं तो भी आप एक वाक्य में उसका उत्तर देकर चुप हो जाते हैं। क्या आपका इस तरह का उत्तर देना उचित है ?"

गांधी जी ने इस बालक की सूझ-बूझ की मन-ही-मन खूब प्रशंसा की। उस बालक ने अपनी बात ऐसे अनोखे ढंग से कही थी कि जवाब देना मुश्किल था। पर गांधी जी तो बच्चों के गुरु थे। उन्होंने ऐसा विनोद भरा उत्तर दिया कि बच्चे लाजवाब हो गए।

गांधी जी बोले, "तुम्हारी बात तो ठीक है। पर यह भी तो सोचो कि श्रीकृष्ण को एक ही अर्जुन के प्रश्नों के उत्तर देने थे। और यहाँ इतने सारे अर्जुन हैं। मैं सब अर्जुनों को इतने लम्बे-लम्बे उत्तर कैसे दे सकता हूँ।"

यह सुनकर वहाँ जितने 'अर्जुन' बैठे थे, सब हँस

पड़े । और हँसी की खिलखिलाहट में उनकी शिकायत हँसी में ही उड़ गई ।

सबसे कीमती भेंट

यह घटना सन् १९४२ की है । 'अंग्रेजो ! भारत छोड़ो' आन्दोलन में गिरफ्तार होकर, गांधी जी आगा खाँ महल में नज़रबन्द थे । वहाँ रहते-रहते गांधी जी बीमार हो गए । जब बीमारी बढ़ गई और गांधी जी के जीवन का संकट पैदा हो गया तो विदेशी सरकार ने उन्हें छोड़ दिया । सरकार को लगा कि अगर गांधी जी को नज़रबन्दी के दौरान कुछ हो गया तो देश भर में विद्रोह हो जाएगा ।

जेल से छूटने के बाद गांधी जी बम्बई चले आए । वहाँ समुद्र तट पर जुहू नामक स्थान में रहकर वह स्वास्थ्य लाभ कर रहे थे । डाक्टरों का कहना था कि गांधी जी को पूर्ण विश्राम करना चाहिए । परन्तु दर्शन करने आने वालों के कारण गांधी जी को पूरा विश्राम मिल नहीं पाता था ।

गांधी जी जल्दी स्वस्थ हों और डाक्टरों की सलाह के अनुसार उन्हें पूर्ण विश्राम मिल सके, इसका

प्रबन्ध होना था ।

श्रीमती सरोजिनी नायडू ने जिम्मा लिया कि वे गांधी जी के निवास पर पहरा देंगी और लोगों को भीतर नहीं जाने देंगी। उन्होंने निश्चय किया कि लोगों की नाराज़गी की परवाह किए बिना, डाक्टरों की बात पर अमल होना ही चाहिए ।

दूसरे दिन सवेरे ही वे बंगले के दरवाज़े पर पहरा देने बैठ गईं ।

एक दिन की बात है : एक सांवले रंग का बालक वहाँ आया। उसके सिर के बाल रूखे और अस्त-व्यस्त थे। कपड़े मैले और जहाँ-तहाँ से फटे हुए थे। वह दुबला-पतला था। उसकी अवस्था कोई बारह-तेरह साल रही होगी।

उसने दरवाज़े में बैठी श्रीमती सरोजिनी नायडू को हाथ जोड़कर नमस्कार किया और बोला, "माताजी, मुझे बापू जी से मिलना है।"

श्रीमती सरोजिनी बोलीं, "बापू जी की तबीयत ठीक नहीं है। इसलिए उनसे मिलने-जुलने की मनाही है।"

बालक यह सुनकर टला नहीं। वह विनयपूर्वक बोला, "मैं बहुत दूर से पैदल चलकर आया हूँ।"

श्रीमती नायडू बोलीं, "पर तुम मिलना क्यों चाहते हो। उनके आराम में दखल देना तो उचित नहीं है।"

"मैं बापू के लिए थोड़े से फल लाया हूँ। वह फल अपने हाथ से उन्हें देना चाहता हूँ। मैं उन्हें ज़रा भी बेआराम नहीं करूँगा।"

श्रीमती नायडू ने पूछा, "ये फल तुम कहाँ से लाए; खरीदकर या किसी से माँग कर ?"

बालक को लगा कि उसके मैले और फटे कपड़ों के कारण ऐसा-वैसा समझ लिया गया है। उसके स्वाभिमान को ठेस लगी। उसने दृढ़ता से उत्तर दिया, "मैं मेहनत-मज़दूरी करता हूँ। उन्हीं पैसों से ये फल खरीदकर लाया हूँ। मेरे माता-पिता भी मेहनत करते और कमाते हैं। फिर मैं किसी से क्यों मागूंगा ! माँग कर क्यों लाऊँगा।"

श्रीमती नायडू को लगा कि उन्होंने बच्चे को समझने में भूल की। और शायद यही कारण था कि उन्होंने उसे भीतर जाने दिया। पर उसे समझा दिया कि जाकर चुपचाप फल बापू जी के पास रखकर वापस लौट आना। वहाँ खड़े मत होना और न बात करना।

बालक ने समझा कि काम बन गया। अब तो वह गांधी के पास फल पहुँचाकर और दर्शन करके ही आएगा। वह प्रसन्न था। उसके कदमों में दृढ़ता और चेहरे पर आत्म-विश्वास झलक रहा था। वह भीतर की ओर जा ही रहा था कि आगे फिर रोक दिया गया। यहाँ एक नहीं दो-दो पहरेदार थे।

आप जानते हैं कि पहरेदारों का काम ज़रा कठिन होता है। हर आने-जाने वाले पर नज़र रखनी पड़ती है और ज़रा-सी चूक होने पर डांट भी पड़ सकती है। पर ये पहरेदार आदिकाल से अक्खड़ स्वभाव के होते आये हैं। और जो किसी भी तरह से इन्हें कमज़ोर दिख जाए, उस पर ये अपना रौब खूब जमाते हैं। भगवान् विष्णु के पार्षद जय-विजय ने यही तो किया था।

गांधी जी के बंगले के इन दोनों पहरेदारों में भी अक्खड़पन कम नहीं था। उन दोनों ने लड़के को रोकते हुए कहा, "ऐ लड़के ! कहाँ घुसा चला जा रहा है ? किससे पूछकर भीतर आये हो ?" लड़के ने उनकी आँखों से आँखें मिलाते हुए दृढ़ता से कहा, "वह जो बाहर माताजी बैठी हैं, उनसे पूछकर आया हूँ।"

परेदारों में से एक ने बड़ी रुखाई से पूछा, 'तेरे हाथ में क्या है ? तू यहाँ क्या करने आया है ?"

बालक ने कहा, "ये फल हैं। बापू जी को दूंगा ।"

अब दूसरे पहरेदार ने कड़क कर पूछा, "फल कहाँ से लाया है ? कहीं से चुराकर तो नहीं लाया ?"

बालक को उनका इस तरह बोलना बुरा लगा। बालक ने कुछ-कुछ गुस्से के साथ कहा, "चोरी मैं क्यों करूंगा ! मैं मेहनत करता हूँ और अपनी मज़दूरी के पैसों से खरीदकर लाया हूँ ।"

बालक के तीखे उत्तर को सुनकर उन दोनों को लगा होगा कि यह बालक मैले और फटे कपड़ों में भी एक आन रखता है। उसके सामने वे दोनों अपने को छोटा महसूस करने लगे। खिसियाकर बोले, "अच्छा जा, वहाँ रुकना नहीं, फल देकर तुरन्त चले आना ! समझे !"

बालक ने उनकी बात का उत्तर नहीं दिया और भीतर को चल पड़ा। वह धीमे कदमों से कुछ गंभीर होकर सोच रहा था, "मैंने सुना है कि गांधी जो किसी को छोटा नहीं समझते ! ऊँच-नीच भी नहीं मानते।

अमीरों की अपेक्षा गरीबों को ज़्यादा प्यार करते हैं। फिर उनके पास रहने वाले लोग इतने गये-बीते क्यों हैं ? गरीब लोग क्या चोर होते हैं ! मैले और फटे कपड़े क्या मैले मन से भी बुरे होते हैं !

इसी तरह के विचारों में डूबा वह गांधी जी के कमरे में जा पहुँचा ! उनके चरणों में नमस्कार करके, पोटली खोलकर फल सामने रख दिये।

वह दोबारा नमस्कार करके वापस लौटने लगा तो गांधी जी ने उससे प्यार से पूछा, "क्या नाम है तुम्हारा ? कहाँ से आये ? दरवाज़े पर किसी ने रोका तो नहीं ? तुम्हारे लाए हुए ये फल तो बहुत अच्छे हैं ! तुमने स्वयं क्यों नहीं खाए ? मेरे लिए क्यों ले आए ?"

गांधी जी ने इतने सारे सवाल एक साथ पूछ लिए।

बालक चुप रहा।

गांधी जी ने उसके मुँह की ओर देखते हुए फिर पूछा, "तुमने मेरी बात का जवाब नहीं दिया। तुम्हें बोलने में कुछ तकलीफ तो नहीं होती न !"

अब बालक को लगा कि बोलना ही पड़ेगा इतने बड़े आदमी और इतने प्रेम से पूछ रहे हैं तो उत्तर

देना ही चाहिए। वह बोला, "मुझे बोलने में ज़रा भी कष्ट नहीं होता पर क्या करूँ, वह जो दरवाज़े पर माता जी बैठी हुई हैं, उन्होंने मुझसे कहा है कि बापू से बात न करना। इसीलिए मैं चुप रहा।"

गांधी जी बोले, "अच्छा, यह बात थी! इसलिए तुम चुपचाप वापस लौट रहे थे। तुम मेरे लिए इतने सारे फल क्यों ले आए?"

बालक ने उत्तर दिया, "आप बीमार हैं। फल खाने से जल्दी चंगे हो जाएंगे, यही सोचकर ले आया।"

गांधी जी ने फलों पर नज़र डालते हुए कहा, "फल तो बहुत बढ़िया हैं। इतने सारे फल खरीदने के लिए तुमने पैसे कहाँ से लिए?"

लड़के ने उत्तर दिया, "बापू जी, मैं प्रतिदिन सवेरे एक सेठ के बंगले में माली के साथ काम करता हूँ। फिर दिन में अपनी बस्ती की पाठशाला में पढ़ने जाता हूँ। अपनी मज़दूरी के पैसे से ये फल मैंने खरीदे हैं।"

बालक की बात सुनकर गांधी जी बहुत प्रसन्न हुए। फिर बोले, "तो तुम काम भी करते हो और पढ़ते भी हो। यह तो बहुत अच्छी बात है। मुझे

पढ़ाई के साथ-साथ परिश्रम करने वाले बच्चे बहुत अच्छे लगते हैं। तुम्हारे लाये हुए फल मैं ज़रूर खाऊँगा। पर सारे नहीं। आधे तुम खाओगे और आधे मैं खाऊँगा। यह तुम्हारी मेहनत की कमाई है और इनमें तुम्हारे प्रेम की मिठास है। ऐसे फल मुश्किल से खाने को मिलते हैं।"

बालक बोला, "नहीं बापू जी, ये फल तो आपके ही लिए हैं। ये आपको ही खाने होंगे। आप जल्दी-जल्दी स्वस्थ हो जाइये। आपको तो अभी बहुत देश-सेवा करनी है।"

इस बालक के मुँह स देश-सेवा की बात सुनकर गांधी जी गद्गद् होकर बोले, "मैं तेरे लाए हुए फल खाऊँगा। पर यह तो तुम जानते हो कि बच्चों को दिए बिना बड़े कुछ नहीं खाते हैं। मेरे दिए हुए फल तो तुम्हें खाने ही पड़ेंगे। ठीक है न।" बच्चा बेचारा क्या कहता ?

गांधी जी ने एक बड़ा-सा सेब उठाकर बालक के हाथों में दे दिया।

बालक ने उसे माथे से लगाया, जैसे प्रसाद को लगाते हैं। यह गांधी जी का दिया हुआ प्रसाद ही तो था।

बालक ने गांधी जी को फिर नमस्कार किया और उठने लगा तो गांधी जी ने उसकी पीठ थपथपाते हुए कहा, "मेहनत के पैसों से खरीदी हुई तुम्हारी यह भेंट मेरी नजर में सबसे कीमती है। भगवान् करे तुम जीवन में सदा अपनी मेहनत की ही रोटी खाओ।"

दान का मान

यह घटना सन् १९१५ की है। उस समय गांधी जी मद्रास का दौरा करने गये थे। वे श्री नटेशन के घर ठहरे हुए थे।

सुबह का समय था और गांधी जी उनकी बैठक में बैठकर कुछ लिख रहे थे। इतने में श्री नटेशन का चार-पांच साल का बालक वहाँ आया और गांधी जी के पास चुपचाप खड़ा हो गया। वह ध्यानपूर्वक गांधी जी को काम करते देखता रहा। उनके हाथ की जरा सी पेंसिल को देखकर उसे आश्चर्य हुआ कि इतने बड़े आदमी और इतनी छोटी पेंसिल से लिख रहे हैं। वह पेंसिल इतनी छोटी थी कि गांधी जी जैसे-तैसे उससे काम चला रहे थे।

अब तो वह चुप नहीं रह सका। वह झिझकता

हुआ गांधी जी से बोला, "आप इतनी छोटी पेंसिल से क्यों लिख रहे हैं ? बड़े आदमी तो बड़ी पेंसिल से लिखते हैं।"

गांधी जी ने बच्चे की बात का उत्तर न देकर, बच्चे से प्रश्न किया, "तुम्हारे पास बड़ी पेंसिल है क्या ?"

बालक ने बड़े आत्मविश्वास के साथ उत्तर दिया, "हां, है। मेरी पेंसिल आपकी पेंसिल से बड़ी भी है और चमकदार भी। उसपर सुनहरी अक्षर लिखे हुए हैं। माँ ने मुझे लाकर दी है। लाऊँ, आपको अपनी पेंसिल दिखाऊँ ?"

गांधी जी ने कहा, "लाओ, मैं तुम्हारी पेंसिल जरूर देखूंगा कि कैसी है ?"

बच्चा भागकर भीतर गया और अपनी पेंसिल लेकर खुशी-खुशी वापस आया। गांधी जी को अपनी पेंसिल दिखाते हुए बोला, "देखिये, यह रही मेरी पेंसिल ! कितनी बड़ी है। आपकी तो ज़रा-सी है।"

गांधी जी ने बच्चे से कहा, "तुम्हारी बात तो ठीक है। अच्छा, यह तो बताओ कि तुम मेरी पेंसिल लेकर, अपनी पेन्सिल मुझे दे सकते हो ?"

बालक कुछ सोचने लगा। फिर बोला, "मैं अपनी

पेंसिल किसी को नहीं देता। दीदी को भी नहीं। कि
आपको वैसे ही दे दूंगा। आपकी पेंसिल भी नहीं लूंगा
पिताजी कहते हैं—आप बड़े अच्छे आदमी हैं।"

गांधी जी ने उससे पूछा, "तुम अपनी पेंसिल मु
दे दोगे। मेरी पेंसिल लोगे नहीं। फिर तुम कै
लिखोगे ?"

"मैं माता जी से दूसरी ले लूंगा। पर आप मेर
इस पेंसिल को कहीं खो न देना।"

गांधी जी बोले, "मुझे तुम्हारी बात स्वीकार है
मैं इसे खोऊँगा नहीं और जब तक यह समाप्त न
हो जाती, अपना काम इसी से करूँगा।

बालक प्रसन्न हो गया। रोज़ तो बड़े ही बालक
को कुछ न कुछ देते रहते हैं। आज एक छोटे बाल
ने एक बहुत बड़े आदमी को अपने दान से उपकृ
किया था।

गांधी जी ने पुरानी ज़रा-सी पेंसिल अपनी थैल
में डाल ली और वायदे के अनुसार बालक को दी हु
पेंसिल से लिखने लगे।

बालक ने जब देखा कि उसकी दी हुई पेंसिल क
उपयोग लेने वाले ने तुरन्त शुरू कर दिया है त
उसे अपने दान की सार्थकता का आनन्द हुआ। व

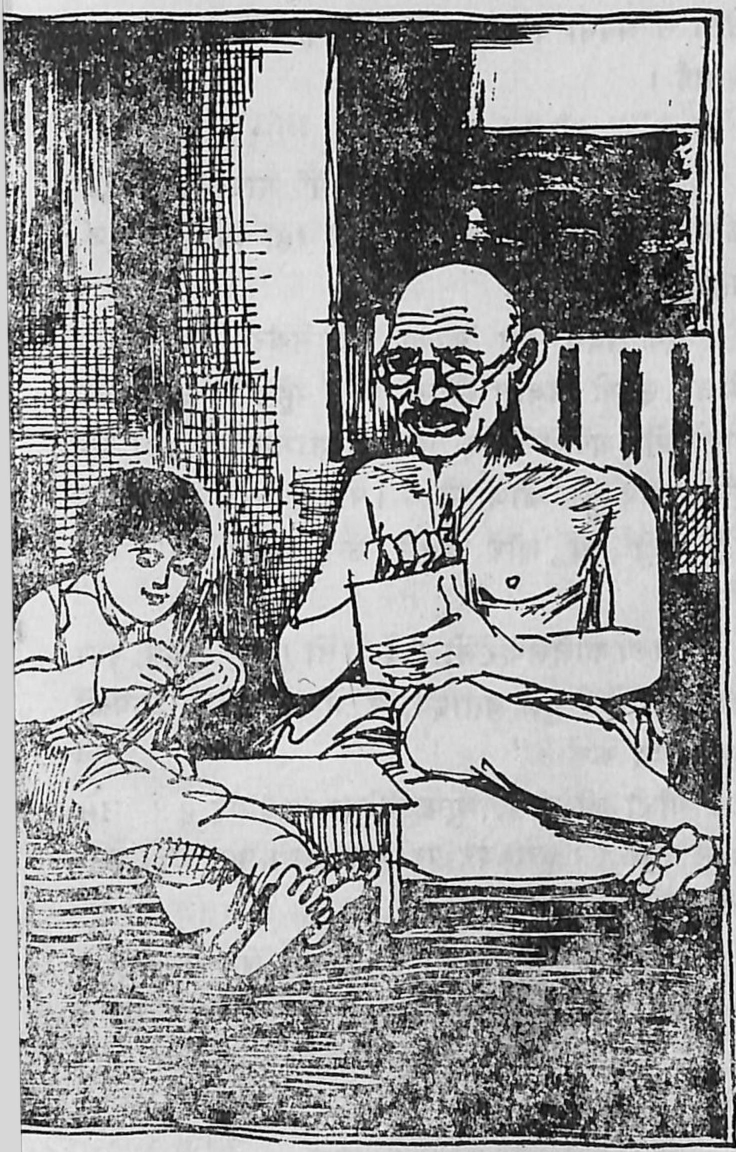

भागकर घर के भीतर गया और वहाँ जो भी मिला, उसी से अपनी पेंसिल गांधी जी को दे देने की बात बताई ।

° ° °

उसी वर्ष, दिसम्बर मास में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का अधिवेशन बम्बई में हो रहा था । गांधी जी वहाँ पहुँचे हुए थे ।

एक दिन श्री काका कालेलकर गांधी जी से मिलने उनके निवास स्थान पर पहुँचे । उस समय गांधी जी अपनी मेज पर रखे सामान को हटा कर इधर-उधर कुछ खोज रहे थे । पर वह चीज़ उन्हें मिल नहीं रही थी और इससे उन्हें परेशानी हो रही थी ।

काका कालेलकर जी ने देखा तो पूछा, "बापू, क्या खोज रहे हैं ? मुझे बताइये, मैं भी खोजने में आपकी कुछ मदद करूँ ?"

गांधी जी बोले, "एक पेंसिल खो गई है । उसे खोज रहा हूँ । कुछ देर पहले तो थी । पता नहीं कहाँ रखो गई ।

काका कालेलकर जी ने अपनी जेब से पेंसिल निकालकर गांधी जी को देते हुए कहा, "यह लीजिए

पेंसिल, अभी तो आप इससे काम लीजिए। उसे बाद में खोज लेंगे।

गांधी जी बोले, "नहीं काका, जब तक वह पेंसिल नहीं मिलेगी, मुझे चैन नहीं पड़ेगी।"

काका कालेलकर बोले, "उस पेंसिल में ऐसी क्या खास बात है जो उसके लिए आप इतने परेशान हो रहे हैं ? मैं भी उसे खोजता हूँ। पर अगर वह न मिली तो क्या कुछ बिगड़ जाएगा ?"

गांधी जी ने उत्तर दिया, "काका, तुम नहीं जानते ! वह पेंसिल मेरे लिए बड़ी महत्वपूर्ण है। उस पेंसिल के साथ एक छोटे बालक का प्यार जुड़ा हुआ है। मैं उसे खोजकर ही दम लूंगा।"

काका कालेलकर जी ने उत्सुकता के साथ पूछा, "वह भाग्यशाली बच्चा कौन है ? मुझे भी तो बताइये।"

गांधो जी बोले, "मद्रास वाले नटेशन का चार-पाँच साल का बालक। बड़े प्रेम से उसने यह पेंसिल मुझे दी थी और मुझसे वचन लिया था कि इसे खोना नहीं। तब से आज तक मैंने उस पेंसिल को खूब संभालकर रखा है।"

गांधी जी की परेशानी को समझकर काका

कालेलकर भी उस पेंसिल की खोज में जुट गए।

बाद में देखा कि वह पेंसिल एक फाइल के बीच इस तरह छिपी बैठी थी, जैसे बिल्ली के डर से चूहा छिप जाता है। गांधी जी को इस नन्हीं पेंसिल ने देर तक परेशान किये रखा।

बड़ी देर की खोज के बाद वह काका कालेलकर को मिली तो गांधी जी को थमा दी। गांधी जी उसे पाकर ऐसे प्रसन्न हुए कि कुछ पूछिये मत। वे बोले, "अब जान में जान आई।"

ऐसे थे गांधी जी ! ऐसा था उनका बच्चों से प्यार और ऐसे थे वायदे के पक्के !

झूठ का भण्डाफोड़

यह सन् १९३३ की बात है। गांधी जी पूना के तिलक स्मारक भवन में भाषण देने गए थे। सभा के संयोजकों ने दो आने प्रवेश शुल्क रखा था।

गांधी जी ने अपना भाषण हिन्दी में शुरू किया। इतने में सभा में बैठे कुछ लोगों ने 'इंगलिश प्लीज' अर्थात् अंग्रेजी में बोलिये—का नारा लगाना शुरू कर दिया।

गांधी जी ने अपना दायां हाथ ऊपर उठाकर पहले तो सबको शान्त किया, फिर हिन्दी में पूछा, "जो लोग हिन्दी समझ सकते हैं, वे अपना हाथ ऊपर उठाएं।"

कुछ लोगों ने अपने हाथ ऊपर उठा दिये। उनसे हाथ नीचे करने को कहकर, गांधी जी फिर हिन्दी में बोले, "अब जो लोग हिन्दी नहीं जानते, वे अपना हाथ ऊपर उठाएं।"

उनकी इस घोषणा को सुनकर एक व्यक्ति ने हाथ ऊपर उठा दिया।

फिर क्या था। उस ऊपर उठे हाथ को देखकर सभा में जोर का ठहाका लगा।

बात यह थी कि गांधी जी हिन्दी में बोल रहे थे। उन्होंने हिन्दी में ही पूछा था कि जो हिन्दी नहीं जानता, वह हाथ खड़ा करे। जिस व्यक्ति ने हिन्दी न समझने के लिए हाथ उठाया था, अगर वह हिन्दी नहीं समझता था तो हाथ कैसे उठा सकता था! इस बात पर लोगों ने ठहाका लगाया था।

गांधी जी ने हँसी-हँसी में अंग्रेजों के पक्षपातियों की पोल खोल दी थी। अब वे झेंप रहे थे और गांधी जी हिन्दी में भाषण कर रहे थे।

बच्चे और बापू

यह साबरमती आश्रम की घटना है।

एक दिन गांधी जी अपने कमरे में बैठकर, 'नव जीवन' पत्र में प्रकाशित करने के लिए लेख लिख रहे थे। इतने में आश्रम के बालक उनके पास आए और प्रणाम करके खड़े हो गए।

गांधी जी ने सिर ऊपर उठाया और एक नज़र उन पर डालने के बाद पूछा, "आज सवेरे-सवेरे यह बानर सेना मेरे कमरे में क्यों चढ़ आई?"

उनमें से एक प्रमुख बालक बोला, "आज आपको हमारे साथ साबरमती नदी में नहाने चलना होगा।"

"अरे वाह रे डिक्टेटर! नेता बनकर इस तरह हुक्म चलाना तुमने कब से सीख लिया?" उस बालक की आँखों में देखते हुए गांधी जी खिलखिलाकर हँस पड़े।

वह बालक थोड़ा झेंपा। शायद उसे लगा होगा कि मुझे बापू से आज्ञा देने के स्वर में नहीं बोलना चाहिए था। उसने विनती करते हुए कहा, "आज तो आपको हमारी बात माननी ही पड़ेगी। चलिये न

बापू !"

गांधी जी ने उसे समझाते हुए कहा, "आज तुम्हारी इच्छा पूरी करने के लिए मेरे पास समय नहीं है। फिर कभी चलूंगा।"

अब दूसरा बालक बोला, "समय आपके पास होता ही कब है। आप तो हर समय किसी न किसी काम में लगे ही रहते हैं।

तीसरा बालक बोला, "बापू ! कहीं आप ऐसा तो नहीं मानते हैं कि बड़ों को बच्चों के साथ खेल-कूद में कभी शामिल होना ही नहीं चाहिये।"

गांधी जी बोले, "नहीं-नहीं, मैं ऐसा नहीं मानता।"

अब चौथा बालक बोला, "बापू, आप हमारी छोटी-सी बात नहीं मान रहे हैं। हम तो आपकी हर बात मानते हैं। आप कहते हैं कि तकली चलाओ तो हम तकली भी चलाने लगते हैं।"

अब पांचवां बोला, "आप कहते हैं कि भगवान् को प्रार्थना किया करो, तो हम चुपचाप बैठकर प्रार्थना करने लगते हैं।"

चौथे और पांचवें बालक के कहने से ऐसा लगता था कि जैसे कह रहे हों कि लट्टू घुमाना छोड़कर

तकली घुमाना और उछल-कूद मचाना छोड़कर, आँखें मूँदकर प्रार्थना करना हमें अच्छा थोड़े ही लगता है। पर आपके कहने से हम इन अरुचिकर कामों को भी करने लगते हैं।

अब छठे की बारी थी, "आपके कहने से ही हम प्रार्थना करते समय आँखें बन्द कर लेते हैं।"

सातवाँ बालक क्यों चुप रहता। उसने कहा, "आपके ही कहने से हम सवेरे कसरत भी करते हैं।"

बच्चों ने अपने पक्ष को काफी अच्छे ढंग से प्रस्तुत किया था। उन्होंने अन्त में अपने असली मुद्दे को फिर दोहराया : "देखिये, हम आपकी इतनी सारी बातें मानते हैं, और आप हमारी एक बात भी नहीं मान रहे हैं। आज तो आपको हमारी बात माननी ही पड़ेगी। आपको हमारे साथ नहाने चलना ही पड़ेगा।"

बालकों ने बापू की स्वीकृति की प्रतीक्षा नहीं की। उनमें से एक भीतर गया और कस्तूरबा से बापू की धोती और तौलिया माँग लाया।

दूसरे ने चप्पल की जोड़ी उठाई और सामने रख दी।

इन बालकों के प्रेमपूर्ण अनुरोध को टालना कठिन था। गांधी जी अपने कागज-पत्र समेटने लगे। बच्चे

अपनी इस जीत पर उछल पड़े। उनकी किलकारियों से सारा आश्रम गूँज उठा।

गांधी जी मन-ही-मन बच्चों के निश्छल प्रेम का आनन्द ले रहे थे। बच्चों को द्रवीभूत देखकर उन्होंने सोचा कि इस अवसर का लाभ उठाना चाहिये। गांधी जी ने कहा, "मेरी एक शर्त है।"

बच्चों की तरंग में रुकावट पड़ी। उन्होंने सोचा, 'कहीं बना बनाया खेल बिगड़ न जाए।' सब बालक सावधान होकर गांधी जी के मुँह की तरफ देखने लगे कि देखें अब क्या कहते हैं।

गांधी जी ने कहा, "देखो, तुम लोग हँसते-खेलते कभी जरा-सी बात पर गुस्से में आकर लड़ पड़ते हो। एक-दूसरे को गालियाँ तक बकने लगते हो। अगर तुम सब मिलकर यह प्रतिज्ञा करो कि सभी आपस में प्रेम से रहोगे और कभी लड़ो-झगड़ोगे नहीं, कोई किसी को गाली नहीं देगा, तब मैं तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूँ।"

बच्चों ने वचन दे दिया। गांधी जी उनके साथ साबरमती नदी में स्नान करने चले।

नदी के किनारे पहुँचे। गांधीजी के हर काम में एक व्यवस्था होती थी। वह हर अवसर का उपयोग

प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सीख देने के लिए करते थे।

उन्होंने सबके कपड़े एक साफ जगह पर संभाल-कर रखवाए। फिर सबको कहा कि नदी में डुबकी लगाने और तैरने से पहले अपने-अपने हाथ-पैर, नाक-कान और मुंह को अच्छी तरह साफ कर लें।

सबने वैसा ही किया। अब तैरना सीखने की बारी थे। तैराकी सिखाने के गुरु भी गांधी जी ही थे।

बच्चों ने गांधी जी से पूछा, "आप तैरना जानते हैं क्या ?" फिर उत्तर की अपेक्षा और प्रतीक्षा किये बिना बोले, "हमें ज़रा तैर कर दिखाइये न।"

गांधी जी ने कहा, "क्या तुम समझते हो, मैं तैरना जाने बिना ही तुम्हें तैरना सिखाने चला हूँ। मैं वैसा गुरु नहीं हूँ।"

यह कहकर गांधी जी ने धोती को लंगोट की तरह कसकर बांधा और तैरने लगे।

गांधी जी कोई सौ-डेढ़ सौ गज तक तैरकर गये। गांधी जी को तैरता देखकर बच्चों की खुशी का क्या कहना। वे तालियाँ पीटते, किलकारियाँ मारते और 'वाह-वाह' का शोर करते गांधी जी को तैरने के लिए जोश भरने लगे।

कुछ बच्चे छिछले पानी में नहा रहे थे। जिन्हें तैरना आता था वे ज़रा गहरे में तैर रहे थे। भला बच्चे पानी में हों और एक-दूसरे को छींटे न दें, यह कैसे हो सकता है !

आखिर गांधी जी ने बच्चों से बाहर निकलने को कहा। सबने अपने-अपने तौलिये से बदन पोंछा और कपड़े पहनकर वापस लौटने को तैयार हो गए।

एक बालक ने चुप्पी तोड़ते हुए गांधी जी से पूछा, "बापू, एक बार साबुन लगाने से आपको दाद हो गई थी न ! क्या साबुन लगाने से दाद हो जाती है ? वह पूरी बात तो सुनाइये !"

गांधी जी बोले, "यह कहना तो ठीक नहीं होगा कि साबुन लगाने से दाद हो गई। वह दूसरी बात थी। मैं तब अठारह-उन्नीस साल का होऊँगा। समुद्री जहाज़ पर बैठकर मैं विलायत जा रहा था बैरिस्टरी पास करने। उन दिनों मैं साबुन लगाकर नहाने को शान और सभ्यता की बात समझता था। जहाज़ पर समुद्र के खारे पानी से नहाना पड़ता था। खारे पानी के कारण साबुन शरीर पर पूरी तरह घुलता नहीं था। इसी कारण मुझे दाद हो गई।"

बालक ने सारी बात ध्यानपूर्वक सुनने के बाद पूछा, "फिर वह दाद ठीक कैसे हुई ?"

"ठीक कैसे हुई, यह मत पूछो। डाक्टर ने दाद पर लगाने के लिए एक दवाई दी। उस दवाई को लगाने पर इतनी जलन होती थी कि मैं रोने लगता था।" गांधी जी ने कहा।

बच्चे को बापू के रोने की बात सुनकर थोड़ा आश्चर्य हुआ। वह तो आज के बापू को जानता था, जो उसकी नज़र में कभी रोएगा नहीं। उसने कहा, "क्या एकदम हमारी तरह रोने लगते थे क्या ?"

गांधी जी बोले, "बिल्कुल तुम्हारी तरह। दवाई लगाते ही ऐसा लगता कि किसी ने अंगारा रख दिया हो। उस हालत में क्या करता !"

बच्चे को भरोसा तो नहीं हो रहा था कि इतने बड़े बापू भी कभी रो सकते हैं क्या ! पर वह यह भी मानता था कि बापू झूठ नहीं बोलेंगे !

फिर उसे सन्तोष भी हुआ होगा कि आज जो इतने बड़े-बड़े लोग हैं, कभी तो वे भी हमारी ही तरह थे। आज बड़े हो गए तो क्या हुआ !

□ □

I. I. A. S. LIBRARY

Acc. No.

This book was issued from the library on the date last stamped. It is due back within one month of its date of issue, if not recalled earlier.

Library IIAS, Shimla
H 028.5 L 15 G
G1305

पुस्तकायन